ARYAVART SHODH VIKASH PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO. 184-192
ISSN NO.-2347-2944
Vol.-7, No.-I, Issues-VIII YEAR- June-2017

गंगावतरणम् में अलंकार विवेचन

ओम प्रकाश तिवारी
असि0 प्रोफे0–संस्कृत विभाग, श्री नीलम देवी पी0जी0 कालेज, धतुरी टोला, बैरिया–बलिया (उ0प्र0) भारत

(क) अलंकार विवेचन– महाकवि नील कण्ठ दीक्षित एक रससिद्ध कवि हैं। उन्होंने अनुप्रास, यमक, श्लेष आदि शब्दालंकारों और उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक, अतिशयोक्ति, अर्थान्तर न्यास, दीपक, काव्यलिंग, विषम आदि अर्थालंकारों का भरपूर प्रयोग किया है। यद्यपि इनका अलंकार प्रयोग सायास नहीं लगता। इनके काव्य में अलंकार स्वतःस्फूर्त ढंग से ग्रथित होते चले जाते हैं। उत्प्रेक्षाओं की नवीनता नीलकण्ठ दीक्षित की निजी विशेषता है। इनकी उत्प्रेक्षाओं को देखकर बाणभट्ट का कथन 'उत्प्रेक्षादाक्षिणात्येषु' का स्मरण हो आता है। यद्यपि नीलकण्ठ दीक्षित बाणभट्ट के परवर्ती कवि हैं फिर भी दाक्षिणात्य कवियों की विशेषताओं का इन्होंने अनुसरण किया है।

अनुप्रास अलकांर–

वर्णसाम्यमनुप्रासः।1

वर्णो की समानता (आवृत्ति का नाम) अनुप्रास है। स्वरों का भेद होने पर भी केवल व्यंजनो की समानता ही यहाँ वर्णों की समानता से अभिप्रेत है। रसादि के अनुकूल वर्णो का प्रकृष्ट सन्निवेश अनुप्रास कहलाता है।

उदाहरण– तं तुरंगमपि मद्दृशुस्ते तापसस्य कपिलस्य समीपे।
चोर इत्यमुमभिद्रवतां यद्वस्मतामदित हुंकृतिरस्य।। 2.6।।
सा ततो गिरिसुताकलयन्ती तं च निग्रहमनुग्रहमेव।
ऊर्मिभिः प्रलयसागरघोरैरुत्पपात कवलीकरणाय।। 2.12।।

1. द्रष्टव्य –काव्य प्रकाश, नवम उल्लास

गंगावतरणम् में अनुप्रास अलंकार के अन्य उदाहरण निम्नलिखित स्थलों पर द्रष्टव्य हैं– 2.6, 2.12, 3.49, 4.88, 6.28।

2. यमक अलकांर–

आवृत्तवर्णस्तवकं स्तवकन्दाङ्कुर कवेः।
यमकं प्रथमा धुर्यमाधुर्यवचसो विदुः।।1

मधुरभाषी विद्वानों में श्रेष्ठ आलंकारिकों ने कवि की प्रशंसा करने वाले अनेक वर्णो की आवृत्ति के समूह को अलंकार कहा है। जैसे– इसी पद्य में स्तबक–स्तवक, माधुर्य–माधुर्य इन दोनों जगहों पर वर्ण समूह की आवृत्ति है। इसलिए यहाँ यमक अलघङ्कार है।

उदाहरण– तपोभिरल्पैर्दयते च देहिनां स देवदेवः शशिखण्डमण्डनः।
दयापि सा देयमदेयमित्यमुं विभागमेव प्रथमं न बुध्यते।। 3.51
प्रशान्तं पावनं तत्र प्राप्य राज्ञस्तपोवनम्।
तस्थौ तपस्यतस्तस्य पुरतः पुरशासनः।। 4.61

गंगावतरणम् में यमक अलंकार के अन्य उदाहरण निम्नलिखित स्थलों पर द्रष्टव्य हैं–3.51, 4.19, 4.61, 4.76, 5.4, 5.13।

3. श्लेष अलकांर–

वाच्यभेदेन भिन्ना यद् युगपद्भाषणस्पृशः।
श्लिष्यन्ति शब्दाः श्लेषोऽसावक्षरादिभिरष्टधा।।2

1. द्रष्टव्य – चन्द्रालोक, पंचम मयूख

2. द्रष्टव्य– काव्य प्रकाश, नवम उल्लास

अर्थ का भेद होने से भिन्न–भिन्न शब्द समानानुपूर्वीक–समानाकार मिल जाते हैं तब श्लेष रूप शब्दालंकार होता है। वह अक्षर आदि के भेद से आठ प्रकार का होता है, जो निम्न हैं–

1. वर्णश्लेष	2. पदश्लेष	3. लिङ्गश्लेष	4. भाषाश्लेष
5. प्रकृतिश्लेष	6. प्रत्ययश्लेष	7. विभक्तिश्लेष	8. वचनश्लेष।

उदाहरण–

भिदन्तमद्रीन्सरसीर्विशन्तं व्यापाटयन्तं च वनान्तराणि।
प्रवाहमस्या नयति स्म यत्नाद्गगीरथो मत्तमिव द्विपेन्द्रम्। 6.46

अनुरूपी लेखक

ASVS Society Reg. No. 561/2013-14

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-7, No.-I, Issues-VIII YEAR- June-2017

गंगावतरणम् में श्लेष अलंकार के अन्य उदाहरण निम्नलिखित स्थलों पर द्रष्टव्य हैं–1.36, 6.27, 6.46, 7.37।

4. उपमा अलकांर–

उपमा यत्र सादृश्यलक्ष्मीरुल्लसति द्वयोः
हृदये खेलतोरुच्चैस्तन्वङ्.गी स्तनयोरिव।।1

सुन्दरी नायिका के वक्षःस्थल पर छलकते हुए उभरे स्तनों की तरह जहाँ उपमान और उपमेय दोनो समानता की शोभा से विकसित हों वहाँ उपमालंकार होता है।

विशेष–(क)जिससे उपमा (समानता)बतायी जाय उसे उपमान कहते है।

जैसे– चन्द्रमा के समान मुख है। यहाँ चन्द्र से मुख की समानता बतायी जा रही है। अतः चन्द्रमा उपमान है।

(ख) उपमा के योग्य पदार्थ को उपमेय कहते हैं।

1. द्रष्टव्य –चन्द्रालोक, पंचम मयूख

जैसे– चन्द्र के समान मुख है। यहाँ मुख में चन्द्र की समानता बतायी जाती है। अतः मुख उपमेय है।

(ग) साधारण धर्म उसे कहते है जो उपमान और उपमेय दोनों में एक रूप से रहता है ।

जैसे–चन्द्रमा के समान मुख मनोहर है। यहाँ मनोहरत्व धर्म उपमान चन्द्र और उपमेय मुख इन दोनों में एक रूप से रहता है। अतः साधारण धर्म है।

(ग) एक दूसरे के साथ समानता बताने वाले इव, यथा आदि शब्द उपमा वाचक कहे जाते है।

जैसे– सुन्दरी की छाती पर दोनों स्तन एक दूसरे के समान शोभित होते है। उपमान उपमेय की अपेक्षा हमेशा श्रेष्ठ माना जाता है तथा इसे प्रसिद्ध होना चाहिए।

उपमा की प्रशस्ति में कहा गया है कि उपमा एक नटी है जो विचित्र भूमिका को अपना कर नृत्य करती हुई काव्य के रंगमचं पर रसिकों का मनोरंजन करती है।

उदाहरण–

समुद्यतस्तस्य जलान्नृपस्य मुखेन मुग्धस्मितसुन्दरेण।
उल्लासमासादयति स्म सेना वेलेव सिन्धो : शशलाञ्छनेन।। 8.60
पताकिनीभिः प्रविशन्तमन्तर्लाजैरवर्षन्पुरयोषितस्तम्।
गंगावतारावसरे पुरेव दिव्यैः प्रसूनैर्दिवि देवकन्या :।। 8.86

गंगावतरणम् में उपमा अलंकार के अन्य उदाहरण निम्नलिखित स्थलों पर द्रष्टव्य हैं–1.14, 1.21, 1.22, 1.39, 1. 40, 1.60, 2.62, 3.13, 3.53, 4.36, 4.39, 5.20, 5.48, 5.57, 5.59, 6.15, 6.23, 6.46, 6.60, 7.7, 7.12, 7.24, 8.60, 8.86.

5. रूपक अलकांर–

(1) यत्रोपमानचित्रेण सर्वथाप्युपरज्यते।
उपमेयमयीभित्तिस्तत्र रूपकमिष्यते।।1

1. द्रष्टव्य –चन्द्रालोक, पंचम मयूख

जहाँ उपमानरूप चित्र से उपमेय रूप चित्र सर्वथा मिला हुआ रहे , उपमान उपमेय में एकता प्रतीत हो तो वहाँ रूपकालंकार होता है। इस श्लोक में उपमेय पर भित्ति का आरोप और उपमान पर चित्र का आरोप किया गया है।

(2) तद्रूपकमभेदो य उपमानोपमेययोः।1

उपमान और उपमेय का जिनका भेद प्रसिद्ध है उनका सादृश्यातियशयवश, जो अभेद वर्णन है, वह रूपक अलकांर है। अत्यन्त सादृश्य के कारण प्रसिद्ध अनपह्नुत भेद वाले उपमान और उपमेय का अभेद वर्णन रूपकालकांर कहलाता है।

उदाहरण–

कनकभूधरमूलमणित्विषा गलितसंतमसेऽथ रसातले।
भुजंगराजभुजार्गलपातितां धुरि ददर्श भोगवतीं पुरीम्।। 8.34

गंगावतरणम् में रूपक अलंकार के अन्य उदाहरण निम्नलिखित स्थलों पर द्रष्टव्य हैं– 1.5, 1.17, 1.47, 1. 58, 4.4, 4.13, 4.32, 4.64, 5.59, 6.8, 8.34.

6. उत्प्रेक्षा अलकांर–

उत्प्रेक्षोन्नीयते यत्र हेत्वादिर्निहह्नुतिं विना।
त्वन्मुखश्रीकृते नूनं पद्मैर्वैरायते शशी।।2

निषेध के बिना ही जहाँ कारण, फल और वस्तु स्वरूप में अतिशय संशय किया जाय वहाँ उत्प्रेक्षा होती है।

ASVS Society Reg. No. 561/2013-14

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-7, No.-I, Issues-VIII YEAR- June-2017

1. द्रष्टव्य –काव्य प्रकाश, दशम उल्लास।
2. द्रष्टव्य –चन्द्रालोक, पंचम मयूख

जैसे– तुम्हारे मुख की शोभा प्राप्त करने के लिए चन्द्रमा कमलों से शत्रुता करता है। इव, यथा, वा आदि पदो की सत्ता में अगूढ़ा (वाच्या) उत्पेक्षा होती है और इव, यथा आदि पदों के न होने पर गूढ़ा (प्रतीयमाना) उत्प्रेक्षा होती है। हेतु, फल और वस्तुगत दोनों ही प्रकार की उत्प्रेक्षा होती है। अत : इसके छः भेद हो जाते हैं। जैसे–

उत्प्रेक्षा,

अगूढा, गूढा

हेतूत्प्रेक्षा, फलोत्प्रेक्षा, स्वरूपोत्प्रेक्षा हेतूत्प्रेक्षा फलोत्प्रेक्षा स्वरूपोत्प्रेक्षा

इव शब्द उपमा और उत्प्रेक्षा दोनों का वाचक है। जहाँ 'मानो' अर्थ निकले, वहाँ उत्प्रेक्षा होती है । उपमा में उपमान के प्रसिद्ध होने से समर्थन के लिए किसी विशेषण उपवाक्य और वाक्य आदि की आवश्यकता नहीं होती । इसके विपरीत उत्प्रेक्षा के कवि कल्पित होने से विशेषण आदि की जरूरत पड़ती है। 'मुखं चन्द्र इव' उपमा का उदाहरण हैं क्योंकि इसमें संभावना के लिए अपनी ओर से कुछ नही जोड़ा गया है। इसके विपरीत 'मुखमपरः चन्द्र इव' कहने पर उत्प्रेक्षा होगी क्योंकि विशेषण कविकल्पनाजन्य है और संभावना प्रकट करता है।

उदाहरण–

आमये यमके जाग्रत्यपमृत्यौ च दुष्कवौ।
वाणि प्राणिषि तन्मन्ये वज्रेणैवासि निर्मिता।। 1.30
तृष्णाकदुष्णं पतताममीक्ष्णं पौराङ्ग्नालोचनमण्डलानाम्
उत्सारणायेव स चामराभ्यां संवीज्यमानः शनकैरयासीत्। 8.83

गंगावतरणम् में उत्प्रेक्षा अलंकार के अन्य उदाहरण निम्नलिखित स्थलों पर द्रष्टव्य हैं–1.30, 1.43, 1.52, 1.53, 1.72, 1.78, 2.30, 2.31, 2.35, 3.1, 3.63, 3.66, 4.3, 4.10, 4.16, 4.18, 4.38, 4.44, 4.47, 4.48, 4.65, 4.68, 4.69, 5.28, 5.33, 5.35, 5.41, 5.42, 5.45, 5.46, 5.47, 5.49, 6.25, 6.30, 6.32, 6.33, 6.34, 6.43, 6.44, 6.49, 6.61, 6.62, 7.16, 8.5, 8.69, 7.78, 8.83.।

7. काव्यलिकांर अलकांर–

स्यात् काव्यलिकांर वागर्थो नूतनार्थसमर्पकः।
जितोऽसि मन्दकन्दर्प मच्चित्तेऽसि त्रिलोचनः।।1

जहाँ नया अर्थ बोध कराने वाला पदार्थ या वाक्यार्थ हो वहाँ काव्यलिकांर अलकांर होता है। जैसे– हे मूढ़ कामदेव! मेरे ह्रदय में त्रिलोचन भगवान रुद्र विराजमान है। अतः मैने तुझे जीत लिया है। क्या तुझे यह मालूम नही है? यहाँ 'मेरे ह्रदय में त्रिलोचन हैं' इस वाक्य से कामदाहक शंकर के तृतीय अग्निमय नेत्र रूपी नये अर्थ की प्रतीति होती है अतः यहाँ काव्यलिंग अलकांर है।

उदाहरण–

प्रददावेव सोऽर्थिभ्यः प्रतिजग्राह न क्वचित्।
वासवादसकृद्वृष्टिं लिप्समानस्त्वलज्जतः।। 1.79

गंगावतरणम् में काव्यलिंग अलकांर है। के अन्य उदाहरण निम्नलिखित स्थलों पर द्रष्टव्य हैं– 1.27, 1.33, 1. 37, 1.79, 3.6, 3.8, 3.60, 4.9, 4.22, 4.24, 4.30, 4.83, 4.84, 4.88, 4.90, 5.6, 5.19, 5.53, 5.56

8. व्यतिरेक अलकांर–

उपमानाद् यदन्यस्य व्यतिरेकः स एव सः। 2

उपमान से अन्य अर्थात् उपमेय का जो (विशेषेण अतिरेकः व्यतिरेकः) आधिक्य का वर्णन होता है वह ही व्यतिरेक अलकांर होता है।

1. द्रष्टव्य –चन्द्रालोक, पंचम मयूख
2. द्रष्टव्य –काव्य प्रकाश, दशम उल्लास

उदाहरण–

जानीमो जायसीं लक्ष्म्या जातु ते न तु शारदे।
आः स्मृतं ननु सा वक्रेष्वास्ते दुष्कविसंसदाम्।। 1.28

हे शारदे! हम आपको लक्ष्मी से श्रेष्ठ रूप में जानते हैं। किन्तु कभी–कभी ऐसा अनुभव नहीं होता। अरे, मुझे स्मरण

ASVS Society Reg. No. 561/2013-14

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-7, No.-I, Issues-VIII YEAR- June-2017

हो गया, वह लक्ष्मी कुटिल कवियों की सभा में भी रहती है। अतएव उससे आपकी तुलना नहीं हो सकती।
गंगावतरणम् में व्यतिरेक अलकांर के अन्य उदाहरण निम्नलिखित स्थलों पर द्रष्टव्य हैं– 1.80, 1.81, 3.9

9. विषम अलकांर–

विरुद्धकार्यस्योत्पत्तिर्यत्रानर्थस्य वा भवेत्।
विरूपघटना वा स्याद् विषमालंककृतिस्त्रिधा।।

विषम अलंकार तीन प्रकार का होता है– 1. विरुद्ध कार्य की उत्पत्ति, 2. अनर्थ की उत्पत्ति और 3. विरूप घटना।

क्व नु नाम सभा राज्ञां दुराक्षेपैकशिक्षिता।
क्व नु वाचः सुधीलोकलालनैकरसाः कवेः।।1.23

कहाँ राजाओं की दूषित आरोप में प्रशिक्षित राज्य सभा? कहाँ बुद्धिजीवियों के जीवनाधार रस को धारण करने वाली कवि वाणी? अर्थात् दोनों परस्पर विरोधी हैं। अतः विरूप घटनामूलक विषमालंकार है।

विषम अलंकार का एक और उदाहरण देखिए–

1. द्रष्टव्य –चन्द्रालोक, पंचम मयूख

क्वायं मुनिः क्षत्रकुलप्रसूतः
क्व सा नदी शंभुजटैकधार्या ।
प्रस्तामुना सैव यदि क्षणेन
केनाधिगम्यस्तपसां प्रभावः।।6.38

कहाँ क्षत्रिय वंशी जह्न ऋषि और कहाँ शंभु जटा मात्र में धारण की गयी वह सुरनदी? यदि वही इस मुनि के द्वारा क्षण मात्र में ग्रसित हो गयी तो इसमें आश्चर्य क्या? तपस्या के प्रभाव को कोई नहीं जान सकता।
गंगावतरणम् में विषम अलंकार के अन्य उदाहरण निम्नलिखित स्थलों पर द्रष्टव्य हैं– 2.23, 3.40, 4.74

10. दीपक अलंकार–

प्रतुताप्रस्तुतानां च तुल्यत्वे दीपकं मतम्।
मेधां बुधः सुधामिन्दु र्बिभर्ति वसुधां भवान्।।1

जहाँ प्रस्तुत (प्राकारणिक) और अप्रस्तुत (अप्राकरणिक) इन दोनों प्रकार के पदार्थों के बीच गुण और क्रिया के साथ समता दिखाई जाए, वहाँ दीपक अलकांर होता है। जैसे–जिस प्रकार विद्वान् पुरुष बुद्धि को और चन्द्रमा अमृत को धारण करता है, उसी प्रकार आप इस पृथ्वी को धारण करते है। यहाँ बुध और चन्द्रमा का वर्णन अप्राकरणिक और राजा का वर्णन प्राकरणिक है। धारण रूप क्रिया दोनों पदार्थों के साथ संबन्ध रखती है इसलिए यहाँ दीपक अलकांर होता है।

उदाहरण–

द्वौ हि तेजस्विनौ लोके सविता स च पार्थिवः।
तस्थतुस्तौ विभज्येव दक्षिणोत्तरयोर्दिशोः।।

1. द्रष्टव्य –चन्द्रालोक, पंचम मयूख

दक्षिण और उत्तर दिशा को विभाजित करके स्थिर रहने वाले तेजस्वी सूर्य और राजा भगीरथ दो ही लोक में प्रसिद्ध हैं।

11. सहोक्ति अलकांर–

सहोक्तिः सहभावश्चेद् भासते जनरञ्जनः।
दिगन्तमगमद् यस्य कीर्तिः प्रत्यर्थिभिः सह।। 1

मनोहर रूप से जहाँ दो पदार्थों का सहभाव बताया जाए वहाँ सहोक्ति अलकांर होता है। जैसे– शत्रुओं के साथ–साथ राजा की कीर्ति दिशाओं के अन्त तक पहुँच गयी। यहाँ शत्रु और कीर्ति रूप दो पदार्थों का सहभाव दिखलाया गया है। अतः सहोक्ति अलकांर हैं।

उदाहरण–

ततो जटाभिर्गिरिशस्य पीते तावत्यपि स्रोतसि देवसिन्धोः।
भगीरथोऽपि प्रमथैः सहैव विसिस्मिये प्रागथ विव्यथे च ।। 6.1

तदनन्तर शिव जी की जटाओं द्वारा सुरनदी के सम्पूर्ण जल को पान करने पर प्रमथ गणों के साथ पहले तो राजा भगीरथ आश्चर्य में पड़ गये, तत्पश्चात् दुःखी भी नहीं हुए।

12. निदर्शना अलकांर–

ASVS Society Reg. No. 561/2013-14

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-7, No.-I, Issues-VIII YEAR- June-2017

(1) वाक्यार्थयोः सदृशयौरैक्यारोपो निदर्शना।
या दातुः सौम्यता सेयं सुधांशोरकलकंता।।2

जहाँ भिन्न दो वाक्यों में समता के कारण एकता का आरोप किया जाए वहाँ निदर्शना अलकांर होता है। जैसे– दाता की जो सौम्यता है,

1. द्रष्टव्य –चन्द्रालोक, पंचम मयूख
2. द्रष्टव्य –चन्द्रालोक, पंचम मयूख

वही चन्द्रमा की अकलंकता है। यहाँ उभय वाक्यगत यत्–तत् शब्दों द्वारा एकता का आरोप किया जाता है, अतः निदर्शना अलकांर हैं।

(2) अभवन् वस्तुसम्बन्ध उपमापरिकल्पकः निर्शना।

जहाँ वस्तु का (अभवन्) असम्भव या अनुपद्यमान सम्बन्ध प्रकृत का अप्रकृत के साथ उपमापरिकल्पक (उपमा में पर्यवसित) होता है वह निदर्शना नामक अलकांर होता है।

उदाहरण–

गङगेर्मिभिर्मन्दमनुप्रवृत्तैर्गच्छन्पुरस्तादथ तच्छताङग :।
आकृष्यमाणाङ्.बोलशृंखलस्य गन्धद्विपस्यापजहार शोभाम्।।6.26

अनन्तर अग्रगामी उनके रथ ने गंगा तरंगों से अनुसरित होकर स्वच्छ शृंखला को खींचते हुए चलने वाले मदमत्त हाथी की शोभा को धारण कर लिया।

13. अतिशयोक्ति अलंकार–

निगीर्याध्यवसानन्तु प्रकृतस्य परेण यत् ।
प्रस्तुतस्य यदन्यत्वं यद्यर्थोक्तौ च कल्पनम्।।
कार्यकारणयोर्यश्च पौर्वापर्यविपर्ययः।
विज्ञेयाऽतिशयोक्तिः सा..... ।। (साहित्य दर्पण)

जहाँ अस्वाभाविक रूप से किसी का बढ़ा–चढ़ा कर वर्णन किया जाय, वहाँ अतिशयोक्ति अलंकार होता है।

उदाहरण–

व्यासमेव स्तुमो यस्य वाचं गणयितुं विधिः।
विषीदति वृषाघङ्केण विलूने पञ्चमानने।। 1.2

जिनकी वाणी की गणना करने के लिए शिव के द्वारा पाँचवें सिर के कट जाने पर ब्रह्मा जी कष्ट का अनुभव करते हैं, ऐसे व्यास जी को हम नमस्कार करते हैं।

गंगावतरणम् में अतिशयोक्ति अलंकार के अन्य उदाहरण निम्नलिखित स्थलों पर द्रष्टव्य हैं–1.5, 1.29, 1.46, 1.52, 1.71, 1.74, 1.84, 3.5, 5.11, 5.64, 8.9, 8.73.

14. विरोध अलंकार–

जहाँ गुण क्रिया में विरोध दिखायी पड़े वहाँ विरोध अलंकार होता है।

उदाहरण–

शृण्वन्तोऽपि न शृण्वन्ति जानन्तोऽपि न जानते।
साहितीमितरे तस्या ज्ञाता श्रोता च यः कविः।।1.11

कुछ लोग (अज्ञानता से) साहित्य को सुनते हुए भी नहीं सुनते, जाने हुए भी (प्रवृत्ति के अभाव में) नहीं जानते, साहित्य का ज्ञाता और श्रोता ही कवि है।

विरोध अलंकार का एक और उदाहरण देखिए–

त्रय्यन्त सिद्धाञ्जननिर्मलाक्षै–
स्तपोधनैरप्यनवेक्षितं यत्।
आलक्ष्यते धाम तदेव यस्या–
मात्यन्तिकेनाक्षिनिमीलनेन।। 6.52

जो काशी धाम वैदिक सिद्धता रूपी अंजन से निर्मल नेत्र वाले तपोनिधियों के लिए भी अगोचर रहा है, वही नेत्रों के पूर्ण निमीलन से भी अभिलक्षित होने लगा।

15. अर्थान्तरन्यास अलंकार–

ASVS Society Reg. No. 561/2013-14

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-7, No.-I, Issues-VIII YEAR- June-2017

सामान्यं वा विशषो वा तदन्येन समर्थ्यते।

यत्तु सोऽर्थान्तरन्यासः साधर्म्येणेतरेण वा।।1

सामान्य अथवा विशेष का उससे भिन्न अर्थात् सामान्य या विशेष के द्वारा अथवा विशेष का सामान्य के द्वारा जो समर्थन किया जाता है वह अर्थान्तरन्यास अलंकार होता है।

1. द्रष्टव्य –काव्य प्रकाश, दशम उल्लास

उदाहरण–

दूषणाय न काव्याना दुर्जनाक्षेपसंप्लवः ।
शफरीपरिवर्तैः किं सरसी न प्रसीदति।। 1.21

जैसे मछलियों के निरन्तर पलटने से जल दूषित न होकर निर्मल ही होता है वैसे दुर्जनों के आक्षेप से काव्य दूषित नहीं होता।

एक और उदाहरण देखिए–

स क्षणादजयदासनभेदाज्ञिशक्षणाच्चिरतरं खुरलीषु।
जानता निखिलमभ्यसितव्यं कस्य कुत्र न भवेदुपयोगः।।2.24

राजा भगीरथ ने अस्त्र–शस्त्रों के शिक्षणजन्य चिरंतन अभ्यास को विस्मृत कर योगासन को प्राप्त किया। सम्पूर्ण आसनों के परिज्ञान से कहाँ किसका उपयोग नहीं हो सकता? अर्थात् अभ्यास निरर्थक नहीं जाता।

गंगावतरणम् में अर्थान्तर न्यास अलंकार के अन्य उदाहरण निम्नलिखित स्थलों पर द्रष्टव्य हैं– 2.25, 2.49, 4.20, 5.17, 5.21, 5.60, 6.6, 6.7, 6.19, 6.20, 6.36, 6.38, 6.41, 6.67

16. अर्थापत्ति अलंकार–

जहाँ आक्षेप से अर्थ की प्रतीति करायी जाय वहाँ अर्थापत्ति अलंकार होता है। अर्थापत्ति अलंकार में प्रायः 'अर्थात्' से अर्थ निकाला जाता है।

उदाहरण–

सव्यर्धीपि कवेर्वाणी सापभ्रंशा न शोभते।
लम्बस्तनीं को वीक्ष्येत रम्भामप्युर्वशीमपि।। 1.22

व्यंग्यपूर्ण अपभ्रंसित कवि वाणी सुशोभित नहीं होती, जैसे स्तनों वाली रम्भा और उर्वशी अप्सरा को भी कौन देखना चाहेगा? अर्थात् कोई नहीं देखना चाहेगा।

गंगावतरणम् में अर्थापत्ति अलंकार के अन्य उदाहरण निम्नलिखित स्थलों पर द्रष्टव्य हैं– 1.24, 1.62, 1.85, 2.24, 2.25, 2.28, 2.60, 2.62, 3.5, 3.11

17. सन्देह अलंकार– दो विकल्पों को समान रूप से स्पर्श करने वाली चित्तवृत्ति को सन्देह कहते हैं। इस प्रकार का सन्देहास्पद ज्ञान जब सादृश्य के आधार पर हो और कवि कल्पना पर आधारित होने के कारण चमत्कारपूर्ण हो तो वहाँ सन्देह अलंकार होता है।

उदाहरण–

किं मदक्ष्णोरयं दोषः किं तद्वस्त्वेव तादृशम्।
कामं यन्मौलिरज्ञानां कम्पते कवि सूक्तिषु।। 1.25

कवि सूक्तियों को सुनने पर मूर्खों का जो सिरः कम्पन्न होता है, क्या वह वस्तु ही वैसी होती है अथवा यह मेरे नेत्रों का दोष है?

18. विरोधाभास अलंकार– जहाँ आपाततः देखने में विरोध प्रतीत हो परन्तु श्लेष के माध्यम से दूसरे अर्थ के द्वारा उस विरोध का परिहार हो जाता हो, वहाँ विरोधाभास अलंकार होता है।

उदाहरण–

दयालुरथ भूतेषु दण्ड्येष्वासीत्स निर्दयः ।
संजीवनोऽपि लोकानां चन्द्रमाः पथिकान्तकः।। 1.64

राजा भगीरथ प्राणियों में दया भाव रखते थे और दण्डनीयों में कठोरतम थे। लोक में चन्द्रमा संजीवन है और पथिकों का अन्तक(यमराज, पक्षान्तर में अन्ततक पहुँचाने वाला) भी है।

(ख) छन्द विवेचन– प्रथम सर्ग में अनुष्टुभ् छन्द का प्रयोग किया गया है, जिसका लक्षण है–

श्लोके षष्ठं गुरु ज्ञेयं सर्वत्र लघु पञ्चमम्।

ASVS Society Reg. No. 561/2013-14

द्विचतुष्पादयोर्ह्रस्वं सप्तमं दीर्घमन्ययोः।।

इस छन्द को श्लोक भी कहते हैं। इसके अनेक भेद हैं। परन्तु जिसका सबसे अधिक प्रयोग होता है, उसके प्रत्येक चरण में आठ वर्ण होते हैं। मात्राएँ सबकी भिन्न–भिन्न होती हैं। प्रत्येक चरण का पाँचवाँ वर्ण लघु और छठा दीर्घ होता है। सातवाँ वर्ण दूसरे और चौथे चरण में ह्रस्व और प्रथम तथा तृतीय चरण में दीर्घ होता है। उदाहरण द्रष्टव्य है–

अद्भुतं किमपि द्वन्द्वमस्तु तन्मम शर्मणे।
स्वस्तिकस्तनुते यस्य सुदृढाश्लेषनिर्वृतिम्।। 1.1

प्रथम सर्ग का अन्तिम पद्य शार्दूलविक्रीडित छन्द में है। इसके प्रत्येक चरण में मगण, सगण, जगण,सगण, तगण, नगण तथा अन्त में एक गुरु वर्ण होता है–

सूर्याश्वैर्यदि मः सजौ सततगाः शार्दूलविक्रीडितम्।

उदाहरण देखिए–

साम्राज्यं यदि सप्तमार्णवतटीविश्राम्यदाज्ञाक्षरं
सौन्दर्यं यदि मुद्रिताः स्मरगिरः साचेन्मतिः को गुरुः।
यौर्यं चेत्पुनरन्यदेव तदिति स्तोत्रं विचित्रं सतां
श्रृण्वन्नेव भगीरथक्षितिपतिर्निन्ये सहस्रं समाः।। 1.86

दूसरे सर्ग में स्वागता छन्द का प्रयोग है, जिसमें 11 वर्ण होते हैं। इसके प्रत्येक चरण में रगण, नगण, भगण और दो गुरुवर्ण होते हैं– स्वागतारनभगैर्गुरुणा च।

उदाहरण –

पौरजानपदपार्थिवलोकप्रस्तुतस्तुतिवचोमुखरायाम्।
जातु संसदि निषद्य सुहृद्भिः संलपन्नति निनाय स कालम्।।2.1

द्वितीय सर्ग का अन्तिम पद्य वसन्ततिलका है। इसके प्रत्येक चरण में चौदह वर्ण होते हैं और क्रमशः तगण, भगण, जगण, जगण तथा अन्त में दो गुरु वर्ण होते हैं–

उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौगः।

उदाहरण– संव्यानमूर्म्रिलतिकाव्यतिषर्ङ्गलब्ध–
फेनानुलेपमिव पाण्डरमावहन्तीम्।
पश्यन्पुरस्तनुमतीं सुरलोकसिन्धुं
सिद्धं मनोरथममंस्त दिलीपसूनुः।। 2.65

तीसरे सर्ग में वंशस्थ छन्द का प्रयोग हुआ है, जिसके प्रत्येक चरण में बारह वर्ण होते हैं और गणविन्यास का क्रम होता है– जगण, तगण, जगण और रगण।

वदन्ति वंशस्थविलं जतौ जरौ।

उदाहरण–

ततः प्रणामैः स्तुतिभिश्च पार्थिवं
प्रसादयन्तं सुरलोकवाहिनी।
जगाद सद्यो जगदण्डमण्डलं
निमज्जयन्तीव वचोभिरेव सा।। 3.1

अंतिम पद्य में मञ्जुभाषिणी छन्द है, जिसे सुनन्दिनी या प्रबोधिता भी भी कहते हैं। इसके प्रत्येक चरण में 13 वर्ण होते हैं। सगण, जगण, सगण, जगण और अन्त में एक गुरु वर्ण होता है।

सजसा जगौ च यदि मञ्जुभाषिणी।

उदाहरण–

सुरसिद्धतापसगतागतोचितां
परिहृत्य तत्र पदवीं भगीरथः।
अधितिष्ठति स्म तटमस्य पावनं
हृदयं च तस्य पुनरिन्दुशेखरः।। 3.71

अनुष्टुभ छन्द का ही प्रयोग चौथे सर्ग में भी किया गया है, जो प्रथम सर्ग में प्रयुक्त है, उसका लक्षण वहाँ बताया गया है। चतुर्थ सर्ग से अनुष्टुभ् का एक उदाहरण देखिए–

ASVS Society Reg. No. 561/2013-14

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-7, No.-I, Issues-VIII YEAR- June-2017

स वाह्यकरणग्रामसंविधानानुरोधिनीम् ।
आकृष्य मानसीं वृत्तिमाधत्त मदनान्तके।। 4.1

चतुर्थ सर्ग का अंतिम पद्य शार्दूलविक्रीडित छन्द में है, जिसका लक्षण पूर्व में बताया गया है–

बद्धस्रस्तकपर्दकन्दरपतद्भोगीन्द्रचन्द्राङ्कुर–
क्षेपव्यावृतनन्दिदृष्टिवलनव्याधूतदिग्भितयः।
सावष्टम्भमहेशसंभ्रमपरित्रस्यत्त्रिलोकस्तुताः
पारे मद्वचसाममर्त्यतटिनीसंपातपूर्वक्षणाः।। 4.95

पाँचवें सर्ग के सभी पद्य रथोद्धता छन्द में हैं। इसके प्रत्येक चरण में ग्यारह वर्ण होते हैं। रगण, नगण, रगण के बाद एक लघु और एक गुरु वर्ण होता है–

रात्परैर्नरलगै रथोद्धता।

उदाहरण–

प्रान्तसंक्रमिततारया दृशा
पश्यति त्रिपुरशासने ततः।
अस्मरत्सुरनदीमहंकृतां
ध्यानयोगविधिना भगीरथः।। 5.1

पञ्चम सर्ग का अंतिम पद्य हरिणी छन्द में है। इसके प्रत्येक चरण में 17 वर्ण होते हैं। नगण, सगण, मगण, रगण, सगण, लघु, गुरु वर्ण।

प्रणमदमरग्रामप्रस्तूयमानमहास्तव–
स्तबकितगुहामूलाः कैलासशैलतटास्तदा।
प्रशमितवियद्गर्धौहंकारसंकथनादृत
प्रथमपरिषच्छन्नाः किं नाम नादधतेऽद्भुतम्।। 5.67

छठें सर्ग में उपजाति छन्द का प्रयोग हुआ है, जो इन्द्रबज्रा और उपेन्द्र बज्रा का मिश्रण होता है।

अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ
पादौ यदीयावुपजातयस्ताः।
इत्थं किलान्यास्वपि मिश्रितासु
वदन्ति जातिस्विदमेव नाम।।

उदाहरण–

ततो जटाभिर्गिरिशस्य पीते तावत्यपि स्रोतसि देवसिन्धोः।
भगीरथोऽपि प्रमथैः सहैव विसिस्मिये प्रागथ विव्यथे च।। 6.1

सर्गान्त श्लोक में शार्दूलविक्रीडित छन्द का प्रयोग किया है–

स्वच्छन्द प्रचरद्वगीरथरथक्रेंकारधाराश्रव–
प्रत्युद्यन्मुनिलोकलोचनपुटीनिर्वेदसर्वंकषैः।
स्रोतोभिर्घनसारसान्द्रशिशिरैः स्वर्लोककल्लोलिनी
तामालिम्पदिवेन्दुचूडनयनज्वालाजटालां पुरीम्।।6.69

सप्तम सर्ग में वियोगिनी छन्द का प्रयोग हुआ है, जिसे वैतालीय या सुन्दरी भी कहते हैं। यह अर्धसमवृत्त है। इसके प्रथम एवं तृतीय चरण में सगण, सगण, जगण तथा अन्त में एक गुरु वर्ण होता है। द्वितीय एवं चतुर्थ चरण में सगण, भगण, रगण और अन्त में एक लघु तथा एक गुरु वर्ण होता है–

विषमें ससजा गुरुः समें
सभरा लोऽथ गुरुर्वियोगिनी।।

उदाहरण–

अथ सन्निहितं भगीरथं
सरितं तामपि तद्रथानुगाम्।
अवलोकितुमिच्छतां नृणा–
मतुलस्तत्र बभूव संभ्रमः।। 7.1

ASVS Society Reg. No. 561/2013-14

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-7, No.-I, Issues-VIII YEAR- June-2017

सर्गान्त श्लोक शार्दूलविक्रीडित छन्द में है, जिसका लक्षण पूर्व में बताया गया है–

आचान्तो नयनैरपक्ष्मबलयैरायम्य पौरैर्जनै–
र्धावं धावमुपावरुन्ध्य सरणिं सङ्घीभवद्भिः पुरः।
स्पृष्टः साधय साधयेति लहरीहस्तैरिवान्वक्तया,
त्रस्यन्त्या पुरुषासनादतिययौ देवः स वाराणसीम्। 7.50

आठवें सर्ग में द्रुतविलम्बित छन्द का प्रयोग हुआ है, जिसके प्रत्येक चरण में नगण, भगण, भगण और रगण होते हैं। वर्णों की संख्या 12 होती है।

द्रुतविलम्बितमाह नभौभरौ।

सर्गान्त श्लोक में पूर्वोक्त लक्षण वाला शार्दूलविक्रीडित छन्द है–

अस्पृष्टाः कलयापि दुष्कविकुलैरज्ञैरनाकर्णिता
ज्ञानाज्ञानवतां कदाप्यपतिता दूरे दुरूहाध्वनि।
खेलन्तु श्रुतिसंपुटीचुलुकिताः स्वैरं रसज्ञैर्जनै :
प्रत्युक्तिच्यवमाननूतनसुधासाराः कवीनां गिरः।। 8.94

इस प्रकार हम देखते हैं कि महाकवि नीलकण्ठ दीक्षित ने अपने सात सर्गो के इस महाकाव्य में सात छन्दों का प्रयोग किया है। केवल एक छन्द को दो सर्गों में स्थान दिया है। शार्दूलविक्रीडित निश्चित रूप से इनका प्रिय छन्द है जिसका प्रयोग प्रायः सर्गान्त श्लोकों में इन्होंने किया है। इन्हीं छन्दों में दो–एक अप्रचलित या अप्रसिद्ध छन्दों का प्रयोग कर कवि ने अपने छन्दः प्रयोग की कुशलता व्यक्त की है।

*****

ASVS Society Reg. No. 561/2013-14